सतत एवं व्यापक मूल्यांकन

हौव्वा तो नहीं?

कालूराम शर्मा

इन दिनों देश में सतत एवं समग्र मूल्यांकन (सीसीई) के चर्चे हैं। ऐसा माना जा रहा है कि स्कूली शिक्षा में गुणात्मक सुधार का रामबाण नुस्खा होगा सीसीई। जबसे आरटीई- 2009 में इस बात का जिक्र किया गया है तबसे ही सीसीई को हर राज्य अपनाने के लिए आतुर या कहें कि बाध्य दिखाई दे रहा है। आजकल आरटीई की बाध्यता के चलते अधिकांश राज्य सीसीई को अपना चुके हैं।

बहरहाल, आरटीई गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की पैरवी करता है। कहा यह जा रहा है कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के रास्ते में एक रोड़ा वर्तमान परीक्षा भी होती है। यह सवाल अभी भी हमारे सामने होना चाहिए कि आखिर सीसीई के जरिए जो नया नजरिया पेश किया जा रहा है क्या वह शिक्षण प्रक्रियाओं को संबल प्रदान कर पा रहा है? और वर्तमान परीक्षा की जड़ों को कमजोर कर पाएगा? या कि यह भी एक कर्मकांड बनकर रह जाएगा?

वैसे सीसीई का एकमात्र उद्देश्य यह है कि स्कूल में सीखने-सिखाने का माहौल बने। सीसीई के जो चार मोटे-मोटे तत्व हैं उनका जिक्र करना लाजिमी होगा जो इस प्रकार है।

सतत एवं व्यापक मूल्यांकन-

1. बच्चों की पृष्ठभूमि को समझने के रूप में।
2. सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं को बेहतर बनाने के रूप मे।
3. शिक्षक के सशक्तीकरण के रूप में।
4. परीक्षा प्रणाली में सुधार के रूप में।

दरअसल, ये चार बातें स्कूली शिक्षा को बेहद प्रभावित करती हैं। जिसके साथ सीखने-सिखाने की बात की जा रही है बनाम बच्चे को समझना एक अहम तत्व है। दूसरा कि स्कूल में सीखना-सिखाना कैसे बेहतर हो सकता है। इसको लेकर शिक्षक की तैयारी व शिक्षक को सशक्त बनाना। इसके मायने यह है कि शिक्षक को सीखने-सिखाने के साथ ही आकलन के भी अधिकार देना कि वह क्या और कैसे जांचना चाहता है। चौथा, जिस परीक्षा प्रणाली ने शिक्षा पर कब्जा कर रखा है उसमें सुधार करना।

सीसीई में जो दो 'सी' हैं वे काफी मायने के हैं। पहले 'सी' का आशय है सततता। अर्थात जब कक्षा में बच्चों का सीखना-सिखाना चल रहा हो वहीं शिक्षक यह समझ ले कि बच्चे क्या सीख पा रहे और क्या नहीं। अगर सही मायनों में एक कक्षा में सीखना-सिखाना चल रहा हो तो शिक्षक हर बच्चे पर नजर रखता भी है। दूसरे 'सी' का अर्थ है व्यापकता। एक इंसान के रूप में बच्चे को बनते हुए देखने की कोशिश में शिक्षक उसे व्यापकता में देखे और उसके साथ बर्ताव करे। इसकी चर्चा लेख में हम आगे करेंगे।

दरअसल, सीसीई को जिन भी राज्यों में अपनाया गया है वह एक कार्यक्रम के रूप में या कहें कि एक प्रोजेक्ट के रूप में संकल्पित से अधिक नहीं लगता। सीसीई को एक चुने गए कार्य क्षेत्र में जिसमें कुछ स्कूलों को चुनकर वहां इसका पायलेटिंग किया जाता है। सीसीई की पायलेट कार्यशालाओं में इन चार तत्वों पर संक्षिप्त में बातचीत होते मैंने स्वयं देखी मगर व्यापक स्कूल स्तर पर ये सब पीछे को छूट जाती है और फिर से परीक्षा की तर्ज पर ही सीसीई चल निकलता है। सबसे अधिक जोर इस बात पर होता है कि आखिर शिक्षक के द्वारा किए अवलोकन को प्रपत्र में भरना, बच्चों द्वारा स्वमूल्यांकन प्रपत्र को भरना, पोर्टफोलियो में टिप्पणियां कैसे भरनी है, सीखने-सिखाने के दौरान संकेतक का निर्माण करना और उन्हें बच्चों में देखना और प्रगति पत्रक कैसे तैयार किया जाना है आदि। इन बातों में वक्त और वित्त दोनों बेतहाशा खर्च होते दिखते हैं। सच पूछें तो शिक्षक का स्कूल में अधिक वक्त इन्हीं कर्मकांडों में बर्बाद होता है। इस परिस्थिति में सीसीई भी तथाकथित परीक्षा का ही स्वरूप लेता दिखाई देता है।

सीसीई और सीखना-सिखाना

सीसीई को वाकई में लागू करने की प्रक्रिया के पहले ही किसी राज्य को यह तय कर लेना चाहिए कि स्कूलों में सीखना-सिखाना कैसे बेहतर हो सके। वैसे सीखना-सिखाना स्कूलों में बेहतर न होने का एक प्रमुख कारण हो सकता है परीक्षा की परंपरागत प्रणाली। परीक्षा की यह व्यवस्था शिक्षकों-बच्चों और अभिभावकों में आंतक पैदा करती है। बोर्ड परीक्षा के नतीजे समाज में न केवल गैरबराबरी पैदा करते हैं बल्कि एक दूसरे से तुलना करते हुए तनाव को जन्म देते हैं। यह कहने की जरूरत नहीं कि बोर्ड परीक्षा के नतीजे छात्रों को आत्महत्या तक करने के लिए मजबूर कर देते हैं। सीबीएसई के परीक्षा परिणामों से सबक लिया जा सकता है कि किस तरह से अस्सी फीसदी अंक आने के बावजूद छात्र और उनके अभिभावक तनाव से गुजर रहे हैं। वे इस बात की तरफ ध्यान नहीं देते कि आखिर उनके बच्चों की समझ में कितना इजाफा हुआ है। बहरहाल, सीसीई को अगर कोई राज्य इस रूप में देखे कि इससे सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं को बल मिलेगा अतः शिक्षकों को सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं से लैस किया जाए। तो इसका अर्थ होगा कि सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण को बेहतर बनाया जाए। सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षणों में शिक्षकों को कक्षागत सीखने-सिखाने को लेकर चिंतन-मनन के मौके दिए जाएं। जो बातें सीसीई के संदर्भ में कही गई हैं उन्हें लेकर शिक्षकों की समझ को मजबूत बनाया जाए। एनसीएफ 2005 इस बात पर जोर देता है कि सीखने-सिखाने की प्रक्रिया का एक हिस्सा है बच्चों को और उनकी पृष्ठभूमि को समझना। इस लिहाज से यह जरूरी है कि शिक्षकों का उन्मुखीकरण इस प्रकार से किया जाए कि वे बालमन को टटोलें।

हम देख रहे हैं कि जिस तरह से सीसीई को लागू किया जा रहा है वह पारंपरिक मूल्यांकन का ही एक प्रकार है। सीसीई का वर्तमान ढांचा कुछ इस प्रकार का है कि पल-पल पर बच्चों का मूल्यांकन किया जाता है। सीसीई को हम अगर शिक्षक के सशक्तीकरण के रूप में देख रहे हैं तो फिर शिक्षक पर हमें भरोसा दिखाना होगा। इतना ही नहीं उसे विषय और शिक्षणशास्त्र में सशक्त बनाना होगा। स्कूलों में शिक्षा के नाम पर क्या हो रहा है -वही परीक्षा की तैयारी। यही वजह है कि डेविड ऑसबरा अपने लेख में लिखते हैं कि परीक्षा को हमारे शिक्षा तंत्र से बाहर कर देना चाहिए। वे यह मानते हैं कि शाला शिक्षण के स्तर में गिरावट के कारणों में मूल्यांकन सर्वाधिक शक्तिशाली कारण रहा है।

सीसीई का पहला ''सी'' यानी कि सतत (कंटिन्यूअस)

सीसीई में सतत के तहत दो प्रकार के मूल्यांकन की बात कही जा रहा है- एक है रचनात्मक (फार्मेटिव) और दूसरी योगात्मक (समेटिव)। रचनात्मक का अर्थ है कक्षाओं में रोजाना बच्चों के सीखने-सिखाने के दौरान मूल्यांकन करना कि वे क्या सीख पा रहे हैं और क्या नहीं। इस प्रकार के मूल्यांकन में एक तरफ जहां शिक्षक को अपनी शिक्षण प्रक्रिया को दुरुस्त करने के लिए फीडबैक मिलता है वहीं यह छात्र को अपनी ताकत और कमियां देखने का अवसर देता है।

दूसरा है योगात्मक जिसमें साल में तीन परीक्षाएं होंगी। आमतौर पर इस तरह के आकलन में अंक या ग्रेड दिए जाते रहे हैं। इनका इस्तेमाल शिक्षक के अलावा स्कूल, अभिभावक, राज्य अथवा जिला स्तरीय प्रशासक, रोजगार देने वाली संस्थाएं तथा उच्चतर शिक्षा देने वाली संस्थाएं आदि करती हैं।

अगर हम देखें तो पारंपरिक तौर पर एक स्कूल में कक्षाओं में वर्ष में तीन परीक्षाएं होती थीं- त्रैमासिक परीक्षा, अर्द्धवार्षिक परीक्षा और वार्षिक परीक्षा। अब तो सीसीई के तहत पूरे साल भर ही परीक्षाएं होनी है। उल्लेखनीय है कि सीसीई के पहले ''सी'' का अर्थ है सतत यानी कि कंटिन्यूअस। तो इसके तहत बच्चों का निरंतर मूल्यांकन होना चाहिए। इसके पीछे भावना यह रही है कि जब कक्षाओं में शिक्षिका शिक्षण कार्य कर रही हो तब वह ये देखती रहे कि बच्चों ने अमूक अवधारणा को किस तरह से आत्मसात किया है। इसमें यह देखना भी शामिल है कि बच्ची को उस अवधारणा को समझने में किस प्रकार की कठिनाई आ रही है। दूसरा कि अगर कठिनाई आ रही है तो शिक्षिका अपने शिक्षण कार्य में किसी प्रकार का बदलाव करे ताकि एक बेहतर समझ बन सके। इस सतत मूल्यांकन का अर्थ यह है कि कक्षा में ही मूल्यांकन होता रहे। मगर इसके ठीक उलट अब हर हफ्ते बच्चों को एक टेस्ट देना होता है। दूसरा यह कि बच्चों को उस टेस्ट में उपस्थित रहना होता है।

एक तो यह सुनिश्चित करना मुश्किल है कि बच्चे स्कूल में नियमित आएं। देखने में आ रहा है कि खासकर सरकारी स्कूलों में बच्चों की सबसे बड़ी समस्या यह होती है कि वे नियमित आ नहीं पाते हैं। वैसे तो शिक्षा विभाग बच्चों के नियमित न आने का ठीकरा बच्चों और उनके अभिभावकों पर फोड़ता है। अमूमन यही सुनने को मिलता है कि ''अरे इन बच्चों को तो इनके मां-बाप पढ़ाना नहीं चाहते। या कि इनके अभिभावकों में शिक्षा के प्रति सजगता नहीं है।'' ऐसे और भी तमाम आरोप बच्चों और उनके अभिभावकों पर लगाए जाते हैं। मगर इसे गहराई से समझने की कोशिश नहीं की जाती कि आखिर बच्चे अगर स्कूल में नियमित नहीं आते हैं तो इसके निहितार्थ क्या हैं। कहीं ऐसा तो नहीं कि बच्चों को जिस प्रकार की शिक्षा दी जा रही है वह उन्हें लुभाती नहीं। अगर अभिभावक बच्चों को स्कूल नहीं भेजते तो उन्हें इसका आभास हो कि यह शिक्षा उनके फायदे की नहीं? या कि घर के अन्य कार्य स्कूल जाने से ज्यादा प्रासंगिक हैं? ऐसे तमाम सवाल हो सकते हैं जिनके जवाब हमारे शिक्षा तंत्र के पास नहीं हैं। और सच पूछें तो हमारा शिक्षा तंत्र एक खास सीधे-सपाट रास्ते पर चलता है जो बच्चों और उनकी पृष्ठभूमि को नजरंदाज करता है।

जिस सीसीई की बात की जा रही है उससे ऐसा नहीं कि सरकारी स्कूलों में ही परेशानी है। बल्कि निजी स्कूलों में यह कहीं अधिक कहर ढा रहा है। निजी स्कूलों में हर हफ्ते टेस्ट लिए जाते हैं। और इसकी सबसे मानसिक प्रताड़ना उनके अभिभावकों को उठानी पड़ती है। बच्चों ने क्या सीखा यह इतना महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि जो भी कक्षाओं में पढ़ाया जा रहा है उसका टेस्ट लेना अति जरूरी हो जाता है। निजी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चे साल भर टेस्ट और परीक्षाएं ही देते रहते हैं। जहां उनकी व्यक्तिगत डायरियां लाल स्याही से की गई टिप्पणियों से रंगी होती हैं। वास्तव में यह एक अवधारणात्क समस्या है। सततता को इस रूप में देखा गया है कि जब शिक्षण हो रहा हो तब बच्चों के सीखने के स्तर को समझा जाए न कि हर हफ्ते टेस्ट लिए जाएं। दूसरी समस्या यह है कि हमारी शिक्षण व्यवस्था कक्षाओं के स्तरीकरण से बर्बाद हो रही है। परीक्षा इस स्तरीकरण को और बढ़ावा देती है। यह बात सीखने-सिखाने के मूल स्वरूप के ही खिलाफ है। अगर किसी बच्चे को पहली-दूसरी में पढ़ना नहीं आया तो फिर उसे सिद्धांततः (स्कूल के कथित सिद्धांत के अनुसार) आगे की कक्षाओं में पढ़ना सीखने का मौका नहीं मिलेगा। इतना ही नहीं एक ही साल में कक्षा का पाठ्यक्रम खंडों में इस कदर बंटा होता है कि एक माह पहले कक्षा में क्या किया इसका वर्तमान से कोई लेना-देना नहीं होता। शिक्षा में कुछ मूलभूत चीज़ें हैं मसलन हर बच्चा सीख सकता है, हर बच्चे की सीखने की गति फर्क होती है ये सबकी सब हाशिए के बाहर ही दम तोड़ती रहती है और महज़ जुमलेबाजी तक ही सीमित रह जाती है।

सीसीई का दूसरा ''सी'' यानी कि समग्रता

सीसीई के अंतर्गत जो बहुत जोर से कहा जा रहा है वह यह कि परंपरागत परीक्षा प्रणाली बच्चों के शैक्षिक क्षेत्र के अलावा सहशैक्षिक क्षेत्रों का मूल्यांकन नहीं करती। और दूसरी बात यह कि शैक्षिक क्षेत्रों का भी ठीक से मूल्यांकन नहीं करती। तो बच्चों के सीखने का व्यापक अर्थों में मूल्यांकन किया जाए। बहरहाल, बात तो सही लगती है। मगर ऐसा क्यों है कि एक बच्चे के हर सीखने का मूल्यांकन किया जाए। वैसे तो स्कूली दायरे में हर कुछ तो बच्चे को नहीं सिखाया जाता। अगर हम मान भी लें कि स्कूल सीखने-सिखाने के केंद्र हैं तो वही मूल्यांकन हो जो किया जा सकता है।

हर चीज को मूल्यांकन के दायरे में लाना

वैसे स्कूल, सीखने-सिखाने का एक जरिया है मगर एक निश्चित दायरे में विषयों और अन्य क्षेत्रों में बच्चे सीखते हैं। वास्तव में समाज में रहकर भी बहुत अहम चीजें सीखी जाती है। मगर समाज हर बार और तुरंत ही उनका मूल्यांकन नहीं करता। इस लिहाज से हम स्कूली दायरे में हर चीज को मूल्यांकन की कसौटी पर क्यों परखना चाहते हैं। हां, इसकी कोशिशें होनी चाहिए कि वे मूल्य और हुनर जो एक बच्चे में विकसित होने चाहिए उनको सिखाने के अवसर स्कूल को देने चाहिए।

सीसीई के तहत सह शैक्षिक क्षेत्र के कई मामले हैं इनमें से एक मामला है ईमानदारी। अब आप ईमानदारी का मूल्यांकन कैसे करेंगे। एक निजी स्कूल की छात्रा ने इस बारे में एक दिलचस्प किस्सा सुनाया जो उसके स्कूल में घटित हुआ। उस छात्रा ने बताया कि एक लड़की का पेन गुम गया था। वह पेन उसी कक्षा की एक लड़की को मिला और उसने अपनी कक्षा अध्यापिका के पास जमा कर दिया। अगले दिन उस लड़की को प्रार्थन सभा में सबके सामने शाबाशी दी गई और उसके प्रगति पत्रक में उसे ईमानदार बताया गया। अब यह तो सही है कि रोजान तो ''पेन'' गुमता नहीं है। सो, अब दूसरी लड़कियों को अहसास हुआ कि ऐसा क्या किया जाए कि उन्हें भी ईमानदारी से नवाजा जाए। इस पर एक लड़की ने दूसरे के बस्ते में से एक स्केल निकालकर कक्षा अध्यापिका के पास जमा कर दी। हालांकि वह पकड़ी गई। तो कहने का अर्थ यह है कि स्कूली दायरे में जिन चीजों की जांच की जानी जरूरी हो उनकी ही जांच की जाए। वैसे ईमानदारी का गुण और भी कई प्रकार से जांचा जा सकता है। पर इसे रोजाना तो नहीं जांचा जा सकता ना! विज्ञान शिक्षण के दौरान एक छात्र या छात्रा प्रयोग के निष्कर्ष कितनी ईमानदारी से लिखती है। क्या वह पूर्व के या दूसरे के अवलोकनों की नकल तो नहीं कर रही है। बहरहाल, इस बारे में गिजु भाई दिवास्वपन में कहते हैं ''परीक्षा उन्हीं विषयों की ली जाए जो परीक्षा द्वारा जांचे जा सकते हैं। बाकी विषयों को परीक्षा से मुक्त रखा जाए।'' आगे वे यह भी कहते हैं - ''परीक्षा शिक्षकों द्वारा ही ली जानी चाहिए। वे ही अपने विद्यार्थियों की शक्ति को अधिक जान सकते हैं। उनकी कमजोरी के कारणों से भी वे परिचित रहते हैं।''

शिक्षकों का सीसीई के प्रति नजरिया

शिक्षकों के जो अनुभव सामने आ रहे हैं उनसे पता चलता है कि सीसीई सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं को मजबूत बनाने के बजाय समय जाया करती है। तरह-तरह के फार्मेट भरने में काफी वक्त जाता है। बच्चों का अवलोकन करना और उसे अवलोकन प्रपत्र में दर्ज करना। बच्चों के पोर्टफोलियो में उनकी रचनाओं वगैरह को रखना और उन पर टिप्पणी लिखना, कक्षा शिक्षण के प्रत्येक विषय के प्रत्येक अध्याय के सीखने-सिखाने के संकेतकों का निर्माण करना और उन पर टिप्पणी लिखना जैसे कार्य के चलते सीखने-सिखाने की प्रक्रियाएं भला कैसे सहज और मजबूत हो सकती है।

अगर सटीक विश्लेषण किया जाए तो परंपरागत परीक्षा प्रणाली में शिक्षक का समय साल में तीन बार होने वाली परीक्षाओं में जाता रहा है। वह चाहे तो बाकी वक्त में शिक्षण बेहतर कर ही सकता है। अगर सीसीई की बात करें तो यहां शिक्षक का अधिकांश वक्त सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं के मूल्यांकन में चला जाता है।

प्रतिभा पर्व और 35 फीसदी उत्कृष्ट शालाएंः इतर मूल्यांकन का चक्रव्यूह

दरअसल, समस्या हमारे शिक्षा तंत्र की एक-दो नहीं है। ऐसा नहीं कि सीसीई लागू हो गया तो बाकी सब कुछ इससे निर्धारित हो जाएगा। सीसीई के अलावा और भी कईं प्रकार के मूल्यांकन चलते रहते हैं। इन पर अंकुश लगाने की कोई बात नहीं होती। अगर हम मध्यप्रदेश की बात करें तो पूरे प्रदेश की स्कूलों के बच्चों का मूल्यांकन किया जाता है जिसे प्रतिभा पर्व कहा जाता है। प्रतिभा पर्व में पूरे प्रदेश की स्कूली शिक्षा की तासीर का मूल्यांकन किया जाता है। प्रतिभा पर्व एक शैक्षिक सत्र में दो बार होता है जिसमें शिक्षा विभाग का पूरा अमला जुट जाता है। इस टेस्ट के प्रश्न पत्र राज्य स्तर से बनकर आते हैं।

इसी प्रकार से मध्यप्रदेश के इंदौर जिले में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने के लिए 35 फीसदी शालाओं का चयन कर वहां बच्चों का शैक्षिक सत्र में तीन बार टेस्ट लिया जाता है। ऐसा कहा जा रहा है कि इन टेस्ट के माध्यम से बच्चों का शैक्षिक स्तर पता किया जाता है और फिर उन शालाओं को गुणवत्ता के तय मापदंड पर पाने के बाद अगले चरण में धकेल दिया जाता है। इसके अलावा और किस्म के टेस्ट भी होते रहते हैं जैसे 'असर' की ओर से मूल्यांकन आदि। तो कहा जा सकता है कि सीखने-सिखाने के अवसर दिए बिना निरर्थक मूल्यांकन का सिलसिला चलता रहता है।

क्या है संकेतक

सीसीई का एक जो कि सबसे उबाऊ और क्लिष्ट पहलू है संकेतक बनाना। किसी भी विषय के अध्याय या अवधारणा को पढ़ाने के पहले शिक्षक उसके संकेतक बनाएंगे जिसे सीखने के बिंदु भी कहा जाता है। संकेतक के माध्यम से यह समझने की बात कही जा रही है कि बच्चों में अपेक्षित कौशल या समझ का विकास हुआ है या नहीं। इस पूरी प्रक्रिया में संकेतक बनाना एक यांत्रिक प्रक्रिया बनकर रह जाती है और शिक्षक का ध्यान सीखने-सिखाने से भटककर संकेतक बनाने में लग जाता है। संकेतक एक तरह से सीखने को टुकड़ों में तोड़ देने की कवायद है जो न्यूनतम-अधिगम स्तर (एमएलएल) की ओर ले जाता है। दरअसल हमने एमएलएल को तो खारिज बहुत पहले कर दिया है। इस तरह से संकेतक की प्रक्रिया को अपनाना एक तरह से एमएलएल को अपनाना ही तो है। वास्तव में हम सीसीई को परीक्षा से जुदा करके देख ही नहीं पा रहे हैं। दरअसल, सीसीई के तहत सीखने को समग्र रूप से देखने की उम्मीद की जा रही थी मगर यह तो खंड-खंड पाखंड की तर्ज पर ही लागू किया गया है।

बच्चों की पृष्ठभूमि की समझ और सीखने-सिखाने की अवहेलना

दरअसल, सीसीई को अगर हम इस रूप में देखते कि इसके जरिए हम स्कूलों में सीखने-सिखाने का ऐसा माहौल बना पाएंगे या कि बच्चों को स्वाभाविक तौर पर सीखने के अवसर दिए जा सकेंगे तो यह एक बेहतर कदम होता। मगर, ऐसा होता हुआ दिखता नहीं है। जैसे ही कुछ पढ़ाया-लिखाया कि झट से मूल्यांकन कर डालो कि क्या सीखा। अब ऐसे में सीखना-सिखाना तो हाशिए पर ही रहेगा ना! दूसरा अहम पहलू यह है कि सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षणों में सीसीई के अंतर्गत जो फार्मेट दिए गए हैं उन्हें किस प्रकार से भरा जाना है इससे इतर कुछ खास नहीं होता।

अगर सीखना-सिखाना ठीक से हो जाए तो परीक्षा तो वैसे ही हाशिए पर चली जाएगी। जाहिर है पिछले कई सालों से चिंता यह जाहिर की जा रही है कि परीक्षा ही सब कुछ तय करने लगी है। सीखना-सिखाना हो न हो मगर परीक्षा तो जरूर होगी। और परीक्षा को लेकर पूरा तंत्र और समाज कई तरह के हथकंडे अपनाता है। खासकर बोर्ड की परीक्षाओं के तो ऐसे अनगिनत उदाहरण हैं जो पूरी शिक्षा व्यवस्था पर सवालिया निशान खड़ा करते हैं।

मामला प्रमाण जुटाने का बनाम शक का

शिक्षा में प्रमाण को बड़ा ही महत्व दिया गया है। जो भी कुछ बच्चा करे उसके प्रमाण समेटकर संजोए जाए। चाहे पोर्टफोलियो की बात हो या कक्षा शिक्षण के दौरान अवलोकन की। हर कहीं शिक्षक से कहा जा रहा है कि वह बच्चों के बारे मे जो कुछ किया है उसके प्रमाण जुटाए। पोर्टफोलियो बनाम प्रमाण के पीछे समझ यह है कि बच्चा जो करे उसका रेकार्ड रखा जाए। यह रेकार्ड बच्चे की प्रगति के बारे में कुछ कह सकता है। मगर यह एक कर्मकांड बनकर ही रह गया। अब बच्चे की हर चीज़ को पोर्टफोलियो में रखने के निर्देश हैं। एक शिक्षक अपने छात्र के व्यक्तित्व से लेकर, उसकी विषय के बारे में समझ इत्यादि को लेकर जो समझ बनाता है उसे हरदम रेकार्ड के दायरे में लाना यांत्रिक प्रक्रिया ही तो है। इसके निहितार्थ यह है कि तंत्र को शिक्षक पर संदेह है और उसके द्वारा किए जा रहे शैक्षिक कार्यों पर नजर रखी जाए। क्या यह आजादी शिक्षक पर नहीं छोड़ी जाए कि वह अपने स्तर पर बच्चों को समझने की समझ बनाए। हर किसी चीज के प्रमाण जुटाने की प्रक्रिया सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में बाधक ही बनती है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि आज स्कूलों में सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं को बेहतर बनाने की जरूरत है। सीसीई इस प्रक्रिया में कैसे योगदान कर सकता है इसकी ओर ध्यान देने की जरूरत है। ◆

लेखक परिचयः पिछले पच्चीस सालों से विज्ञान शिक्षण, पर्यावरण अध्ययन, शिक्षा और समाज के विषयों पर निरंतर लेखन। एकलव्य के होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम में लगभग 18 वर्ष तक संलग्न रहे। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन, खरगोन (मध्यप्रदेश) में कार्यरत हैं।

संपर्कः 8226000428; ईमेलः kr.sharma@azimpremjifoundation.org

संदर्भ

1. एनसीएफ 2005
2. मूल्यांकन का मूल्यांकन; डेविड ऑसबरॉ; शिक्षा विमर्श, अगस्त-सितम्बर, 1998; अनुवाद : रोहित धनकर
3. दिवास्वप्न; गिजू भाई बधेका, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, राजस्थान
4. बच्चे असफल क्यों होते हैं?; एकलव्य प्रकाशन, भोपाल, मध्य प्रदेश
5. सतत एवं व्यापक मूल्यांकन - मार्गदर्शिका; एनसीईआरटी, नई दिल्ली